Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

।। कोबातीर्थमंडन श्री महावीरस्वामिने नमः ।।

।। अनंतलब्धिनिधान श्री गौतमस्वामिने नमः ।। ।। गणधर भगवंत श्री सुधर्मास्वामिने नमः ।।

।। योगनिष्ठ आचार्य श्रीमद् बुद्धिसागरसूरीश्वरेभ्यो नमः ।। ।। चारित्रचूडामणि आचार्य श्रीमद् कैलाससागरसूरीश्वरेभ्यो नमः ।।

आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर

पुनितप्रेरणा व आशीर्वाद

राष्ट्रसंत श्रुतोद्धारक आचार्यदेव श्रीमत् पद्मसागरसूरीश्वरजी म. सा.

जैन मुद्रित ग्रंथ स्केनिंग प्रकल्प

ग्रंथांक : १

श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र

आचार्यश्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर
कोबा, गांधीनगर-श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र
आचार्यश्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर
कोबा, गांधीनगर-३८२००७ (गुजरात)
(079) 23276252, 23276204
फेक्स : 23276249
Websiet : www.kobatirth.org
Email : Kendra@kobatirth.org

शहर शाखा

आचार्यश्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर
शहर शाखा
आचार्यश्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर
त्रण बंगला, टोलकनगर
परिवार डाइनिंग हॉल की गली में
पालडी, अहमदाबाद – ३८०००७
(079) 26582355

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जीव विचार

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

श्रीमद्विजयानन्दसूरिभ्यो नमः ।

जीवविचार ।

रचयिता—

श्रीशान्तिसूरि

अनुवादक—

वेदान्ततीर्थ पं० व्रजलाल जी ।

प्रकाशक—

श्रीआत्मानन्द-जैन-पुस्तक-प्रचारक-मण्डल,

रोशनमुहल्ला, आगरा ।

मुद्रक—

सत्यव्रत शर्म्मा शान्ति प्रेस, आगरा ।

वीर सं० २४५३. वि० सं० १६८५
तृतीयावृत्ति ।
शक सं० १८५०. आत्म सं० ३३.

[मूल्य पाँच आना

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

* जीव विचार. *

हिन्दी-भाषानुवाद-सहित.

"बिना किसी विघ्न के इस ग्रन्थके बनानेका काम पूरा हो जाय इसलिये ग्रन्थकार मङ्गलाचरण करते हैं"।

भुवणपईवं वीरं,
नमिऊण भणामि अबुहबोहत्थं ।
जीवसरूवं किंचिवि,
जह भणियं पुव्वसूरीहिं ॥ १ ॥

(भुवणपईवं) संसारमें दीपकके समान, (वीरं) भगवान् महावीर को, (नमिऊण) नमस्कार करके, (अबुहबोहत्थं) अज्ञलोगोंको ज्ञान कराने के लिये, (पुव्वसूरीहिं) पुराने आचार्यों ने, (जहभणियं) जैसा कहा है वैसा, (जीवसरूवं) जीवका स्वरूप, (किंचिवि) संक्षेपसे, (भणामि) मैं कहता हूँ ॥ १ ॥

प्रश्न—जीवका स्वरूप जानने से क्या लाभ है ?

उत्तर—उनको हम अपनी आत्मा के समान समझ

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कर उनसे बर्ताव करें–उनको तकलीफ न पहुँचावें[१]।

प्र०–यदि हम उनको सतावेंगे तो क्या होगा ?

उ०–वे भी हमें सतावेंगे–बदला लेंगे, इस वक्त कमज़ोर होने के सबब से बदला न ले सकेंगे तो दूसरे जन्म में लेंगे।

प्र०–भगवान् को भुवन-प्रदीप क्यों कहा ?

उ०–जैसे दीपक घट पट आदि पदार्थों को प्रकाशित करता है वैसे भगवान् सारे संसार के पदार्थों को प्रकाशित करते हैं–खुद जानते हैं तथा समवसरण में औरों को उपदेश देते हैं–इसलिये उनको भुवन-प्रदीप कहते हैं।

प्र०–यहां अज्ञ किनको समझना चाहिये ?

उ०–जो लोग जीवके स्वरूप को नहीं जानते उनको।

प्र०–पुराने आचार्य कौन हैं ?

उ०-गौतम स्वामी, सुधर्मा स्वामी आदि।

"अब जीव के भेद कहते हैं"

जीवा मुत्ता संसा,—
रिणो य तसथावरा य संसारी।
पुढवी-जल-जलण-वाऊ,—
वणस्सई थावरा नेया ॥ २ ॥

१–शास्त्र का फरमान है कि–"पढमं नाणं तओ दया, एवं चिट्ठई सव्वसंजए। अन्नाणीकिंकाही ? किंवा नाहीय सेव पावगं ?" पहले ज्ञान होगा तब ही अहिंसा धर्म का पालन हो सकता है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

(जीवा) जीव, (मुत्ता) मुक्त, (य) और (संसारिणो) संसारी हैं (तस) त्रस जीव (य) और (थावरा) स्थावर जीव (संसारी) संसारी हैं (पुढवी जल जलण वाऊ वणस्सई) पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और वनस्पतिको (थावरा) स्थावर (नेया) जानना ॥२॥

भावार्थ–जीवके दो भेद हैं मुक्त और संसारी संसारी जीव के दो भेद हैं:–त्रस और स्थावर। स्थावर जीव के पांच भेद हैं:-पृथ्वीकाय, जलकाय–अप्काय अग्निकाय, तेजःकाय, वायुकाय और वनस्पतिकाय।

प्र०–जीव किसको कहते हैं ?

उ०–जो प्राणोंको धारण करे। प्राण दो तरह के हैं भाव प्राण और द्रव्य प्राण चेतनाको भाव-प्राण कहते हैं। पांच इन्द्रियाँ, आंख, जीभ, नाक, कान और त्वचा त्रिविध-बल-मनोबल, वचनबल और कायबल; श्वासच्छ्वास और आयु ये दस द्रव्य प्राण हैं।

प्र०–मुक्त किसको कहते हैं ?

उ०–जिसका जन्म और मरण न होता हो–जो जीव जन्म-मरण से छूट गया हो।

प्र०–संसारी किसको कहते हैं ?

उ०–जो जीव जन्म-मरण के चक्कर में फँसा हो।

प्र०–त्रस किसको कहते हैं ?

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उ०-जो जीव, सर्दी-गरमी से अपना बचाव करने के लिये चल-फिर सके, वह त्रस।

प्र०-स्थावर किसको कहते हैं ?

उ०-जो जीव सर्दी-गरमी से अपना बचाव करने के लिये चल-फिर न सके, वह स्थावर।

प्र०-पृथ्वीकाय आदि का क्या अर्थ है ?

उ०-कायका अर्थ है शरीर; जिस जीव का शरीर पृथ्वी का हो, वह पृथ्वीकाय; जिसका शरीर जलका हो, वह जलकाय; जिसका अग्निका हो, वह अग्निकाय, जिसका वायुकाहो, वह वायुकाय; जिसका वनस्पति का हो, वह वनस्पतिकाय।

"दो गाथाओं से पृथ्वीकाय के भेद कहते हैं"

फलिहमणि-रयण-विद्दुम-,
हिंगुल-हरियाल-मणसिल-रसिंदा ।
कणगाइ-धाउ-सेढी-,
वन्निअ-अरणेट्टय-पलेवा ॥ ३ ॥

अब्भय-तूरी-ऊसं, मट्टी-पाहाण-जाइओ णेगा ।
सोवीरंजण-लूणा,--इ पुढवि-भेआइ इच्चाई ॥४॥

(फलिह) स्फटिक, (मणि) मणि-चन्द्रकान्त आदि (रयण) रत्न-वज्रकर्केतन आदि, (विद्दुम) मूंगा,

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

(हिंगुल) हिंगुल-इंगुर, (हरियाल) हरताल, (मणसिल) मैनसिल मनःशिला, (रसिंद) रसेन्द्र-पारा-पारद (कणगाइ धाउ) कनक आदि धातु-सोना, चांदी, ताम्बा, लोहा, रांगा, सीसा और जस्ता, (सेढ़ी) खटिका-खड़िया, (वन्निअ) वर्णिका-लाल रङ्ग की मिट्टी, (अरणेट्टय) अरणेट्टक-पत्थरोंके टुकड़ों से मिली हुई सफेद मिट्टी, (पलेवा) पलेवक--एक किस्मका पत्थर ॥३॥ (अब्भय) अभ्रक-अबरक, (तूरी) एक किस्म की मिट्टी, (ऊसं) चार भूमिकी-ऊसरकी मिट्टी, (मट्टी पाहाण जाइयो णेगा) मिट्टी और पत्थर की अनेक जातियां, (सोवीरंजण) सुरमा, (लूणाई) लवण-नमक, (इच्चाई) इत्यादि (पुढवि भेआई) पृथ्वी काय जीवों के भेद हैं ॥ ४ ॥

भावार्थ—स्फटिक, मणि, रत्न, मूंगा, हिंगलू, हरताल मैनसिल, पारा, सोना, चान्दी, ताम्बा, लोहा, रांगा, सीसा-शीशा, जस्ता, खड़िया, लाल रंगकी मिट्टी, पाषाणके टुकड़ोंसे मिली हुई सफेद मिट्टी, पलेवक नामक पत्थर, अबरक, तूरी नामक मिट्टी, ऊसर की मिट्टी, और भी काली, पीली आदि रंग की मिट्टी तथा पत्थर, सफेद, काला, लाल रंगका सुरमा, सांभर आदि नमक, इस प्रकार और भी बहुतसे पृथ्वीकाय जीवोंके भेद समझना चाहिये।

प्र०-क्या इन सोने-चान्दीके गहनों में भी जीव है ?

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उ०—नहीं, जब तक सोना-चान्दी खानमें रहता है। तबतक उसमें जीव रहता है, खानसे निकालने पर गलाने से जीव नष्ट हो जाता है। इस तरह पत्थरों को खानसे निकालने तथा मिट्टियों को पैरों तले कुचलने आदि से भी जीव नष्ट होते हैं।

"अब जलकाय के जीवों के भेद कहते हैं।"

भोमंतरिक्ख-मुदगं,
ओसा।हिम-करग-हरितणू-महिआ।
हुंतिघणोदहिमाई,
भेआ णेगा य आउस्स ॥ ५ ॥

(भोमं) भूमिका-कूंआ, तालाब आदिका जल, (अंतरिक्ख मुदगं) अन्तरिक्षका-आकाश का जल (ओसा) ओस, (हिम) बर्फ, (करग) ओले, (हरितणू) हरित वनस्पति के खेतमें बोये हुए गेहूँ, जव आदि के-बालोंपर जो पानी के बूंद होते हैं, वे, (महिया) महिमा-छोटे छोटे जलके कण जो बादलोंसे गिरते हैं, (घणोदहिमाई) घनोदधि आदि, (आउस्स) अप्-काय जीव के, (भेआ णेगा) अनेक भेद, (हुँति) होते हैं ॥५॥

भावार्थ—कूंआ, तालाब आदिका पानी, वर्षा का पानी ओस का पानी, बर्फ का पानी, ओलों का पानी, खेतकी वनस्पतिके ऊपरके जलीय कण,

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आकाश में बादलोंके घिरनेपर कभी कभी सूक्ष्म जल-तुषार गिरते हैं, वे, तथा घनोदधि ये सब, तथा और भी अप्काय जीव के भेद हैं।

प्र०–घनोदधि किसे कहते हैं?

उ०–स्वर्ग और नरक-पृथ्वीके आधार-भूत जलीयपिण्डको।

"अग्निकायजीवोंके भेद कहते हैं।"

इंगाल-जाल-मुम्मुर,--
उक्कासणि-कणग-विज्जुमाईआ।
अगणिजिआणं भेआ,
नायव्वा निउणबुद्धीए ॥६॥

(इंगाल) अंगार-ज्वालारहित काष्ठकी अग्नि, (जाल) ज्वाला, (मुम्मुर) कण्डेकी अथवा भरसांय की गरम राख में रहनेवाले अग्नि-कण, (उक्का) उल्का–आकाशसे जो अग्निकी वर्षा होती है वह, (असणि) अशनि-वज्रकी अग्नि, (कणग) आकाशमें उड़नेवाले अग्नि-कण, (विज्जुमाईआ) बिजली की अग्नि इत्यादि, (अगणिजिआणं) अग्निकाय जीवों के (भेआ) भेद (निउणबुद्धीए) निपुण-बुद्धिसे–सूक्ष्म-बुद्धिसे (नायव्वा) जानना ॥६॥

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भावार्थ--काष्ठ आदिकी ज्वाला-रहित अग्नि, अग्नि की ज्वाला, कंडे की अथवा भरसांय की गरम राख में रहनेवाले अग्नि कण, उल्काकीअग्नि, आकाशीय अग्नि-कण वज्रकी अग्नि, विद्युत् की अग्नि ये तथा अन्य भी अग्निकाय जीवों के भेद सूक्ष्म-बुद्धि से जानना चाहिये।

"अब वायुकाय जीवों के भेद कहते हैं।"

उब्भामग-उक्कलिया,
मंडलि-मह-सुद्ध-गुंजवाया य।
घणतणु-वायाईया,
भेया खलु वाउकायस्स ॥ ७ ॥

(उब्भामग) उद्भ्रामक-तृण आदिको आकाश में उड़ानेवाला वायु, (उक्कलिया) उत्कालिका-नीचे बहने वाला वायु, जिससे धूलिमें रेखायें होजाती हैं। (मंडलि) गोलाकार बहने वाला वायु, (मह) महावात-आन्धी, (सुद्ध) शुद्ध-मन्दवायु, (गुञ्जवाया य) और गुञ्जवायु-जिसमें गूंजनेकी आवाज होती है, (घण तणुवायाईया) घनवात, तनुवात आदि, (वाउकायस्स) वायुकायके (भेया) भेद हैं ॥७॥

भावार्थ-आकाशमें ऊंचा बहने वाला, नीचे बहने वाला, गोलाकार बहने वाला, आन्धी, मन्द-वायु, गुञ्जारव करने वाला वायु, घनवात,

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तनुवात, ये सब, तथा और भी वायुकाय-जीवों के भेद हैं।

प्र०—घनवात और तनुवात में क्या फ़र्क है ?

उ०—घनवात जमे हुए घी की तरह गाढ़ा है और तनुवात तपाये हुए घी की तरह तरल है; घनवात स्वर्ग तथा नरक-पृथ्वी का आधार है और तनुवात नरक-पृथ्वी के नीचे है।

"वनस्पतिकाय जीवों के भेद कहते हैं।"

साहारण-पत्तेआ,
वणसइजीवा दुहा सुए भणिआ।
जेसिमणंताणं तणु,
एगा साहारणा तेऊ ॥ ८ ॥

(सुए) श्रुत में—शास्त्र में, (वणसइ जीवा) वनस्पति-काय के जीव, (साहारण पत्तेआ) साधारण और प्रत्येक ऐसे, (दुहा) दो प्रकारके (भणिया) कहे गये हैं, (जेसिमणंताणं) जिन अनन्त जीवों का (एगा) एक (तणु) शरीर हो, (तेऊ) वे (साहारणा) साधारण कहलाते हैं ॥८॥

भावार्थ—सिद्धान्त में वनस्पतिकाय जीवों के दो भेद कहे गये हैं;–साधारण-वनस्पति-काय और प्रत्येक वनस्पतिकाय। जिन अनन्त जीवोंका शरीर एक हो वे जीव, 'साधारण-वनस्पतिकाय' कहलाते हैं।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

"दो गाथाओं से साधारण-वनस्पतिकाय के भेद कहते हैं।"

कंदा-अंकुर-किसलय,--
पणगा-सेवाल-भूमिफोडा अ ।
अल्लय-तिय-गज्जर-मो,--
त्थ वत्थुला-थेग-पल्लंका ॥ ९ ॥
कोमलफलं च सव्वं,
गूढसिराइं सिणाइपत्ताइं ।
थोहरि-कुंआरि-गुग्गुलि,
गलोय-पमुहाइ-छिन्नरुहा ॥ १० ॥

(कंदा) कंद-आलू, सूरन, मूली का कंद आदि (अंकुर) अंकुर, (किसलय) नये कोमल पत्ते, (पणगा सेवाल) पाँच रंगकी फुल्लि-जो कि बासी अन्न में पैदा होती है, और सिवार (भूमिफोडा) भूमिस्फोट -वर्षा ऋतुमें छत्रके आकारकी वनस्पति होती है, (अल्लय-तिय) अद्रक, हल्दी और कचूंक, (गज्जर) गाजर, (मोत्थ) नागरमोथा, (वत्थुला) बथुआ, (थेग) एक किस्म का कन्द, (पल्लंका) पालखी-शाकविशेष ॥९॥ (कोमलफलं च सव्वं) सब तरहके कोमल फल-जिन में बीज पैदा न हुये हों, (गूढ सिराइं सिणाइं पत्ताइं) जिनकी नसें प्रकट न हुई हों, वे, तथा सन आदिके

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पत्ते, (थोहरि) थूहर, (कुंआरि) घीकुवार, (गुग्गुलि) गुग्गुल, (गलोय) गिलोय-गुर्च, (पमुहाइ) आदि, (छिन्नरुहा) छिन्नरुह-काटनेपर भी उगनेवाली कुछ वनस्पतियाँ ॥१०॥

भावार्थ-आलू, सूरन, मूली का कन्द, अंकुर, नये कोमल पत्ते, और फुल्लि जो कि बासी अन्न में पांच रंग की पैदा होती है और सिवार, वर्षा ऋतुमें पैदा होने वाली छत्राकार वनस्पति, अद्रक, हल्दी, कचूर, गाजर, नागरमोथा, बथुआ, थेग नामक कंद, पालकी, जिनमें बीज पैदा न हुये हों, ऐसे कोमल फल, जिनमें नसें प्रकट न हुई हों, वे, और सन आदि के पत्ते, थूहर, घीकुवार, गुग्गुल तथा काटने पर बो देने से ऊगने वाली गुर्च आदि वनस्पतियां, ये सब साधारण-वनस्पतिकाय कहलाते हैं, इनको अनन्त-काय और बादर निगोदके जीव भी कहते हैं। यहां यह समझना चाहिये कि ये सब गीली वनस्पतियाँ ही सजीव होती हैं, सूखी नहीं।

इच्चाइणो अणेगे, हवंति भेया अणंतकायाणं।
तेसिं परिजाणणत्थं, लक्खणमेयं सुए भणियं ॥११

(इच्चाइणो) इत्यादि, (अणेगे) अनेक, (भेया) भेद, (अणंतकायाणं) अनन्तकाय जीवोंके, (हवंति) हैं, (तेसिं) उनके, (परिजाणणत्थं) अच्छी तरह जानने के

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लिये, (सुए) श्रुतिमें-शास्त्रमें, (एय) यह (लक्खणं) लक्षण, (भणियं) कहा है ॥११॥

भावार्थ—नव और दस की गाथाओं में जो अनन्तकायके भेद गिनाये हैं, उनसे भी अधिक भेद हैं, उन सबको समझानेके लिये सिद्धान्त में अनन्त-काय का लक्षण कहा है।

"अनन्तकाय का लक्षण।"

गूढसिरसंधिपव्वं, समभंग-महीरंग च छिन्नरुहं।
साहारणं सरीरं, तव्विवरीअं च पत्तेयं ॥१२॥

जिनकी (सिर) नसें, (संधि) सन्धियां, और (पव्वं) पर्व-गांठें, (गूढ़) गुप्त हों-देखने में न आवें, (समभंग) जिनको तोड़नेसे समान टुकड़े हों, (अहीरगं) जिनमें तन्तु न हों, (छिन्नरुहं) जो काटनेपर भी ऊगें ऐसी वनस्पतियां-फल, फूल, पत्ते, मूलियां आदि, (साहारणं) साधारण, (सरीरं) शरीर है (तव्विव-रीअं च) और उससे विपरीत, (पत्तेयं) प्रत्येक-वनस्पतिकाय है ॥१२॥

भावार्थ—अनन्तकाय वनस्पति उसको समझना चाहिये "जिस वनस्पतिमें नसें, सन्धियां और गांठें न हों; जिसको तोड़ने से समान भाग हो; जिसमें

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तन्तु न हो; जिसको काटकर बो देने से वह ऊगे;" जिसमें उक्त लक्षण न हो, उस वनस्पतिको 'प्रत्येक-वनस्पति' समझना चाहिये।

"अब प्रत्येक-वनस्पतिकाय के लक्षण तथा भेद कहते हैं।"

एगसरीरे एगो,
जीवो जेसिं तु ते य पत्तेया।
फल-फूल-छल्लि-कट्ठा,
मूलगपत्ताणि बीयाणि ॥ १३ ॥

(जेसिं) जिनके (एगसरीरे) एक शरीरमें (एगो जीवो) एक जीव हो (ते तु) वे तो (पत्तेया) प्रत्येक-वनस्पतिकाय हैं; उनके सात भेद हैं (फल, फूल, छल्लि कट्ठा) फल, पुष्प, छाल, काष्ठ, (मूलग) मूलियाँ, (पत्ताणि) पत्ते, और (बीयाणि) बीज ॥१३॥

भावार्थ–जिन वनस्पतियों के एक शरीरमें एक जीव हो अर्थात् एक शरीरका एक ही जीव स्वामी हो, उन वनस्पतियोंको प्रत्येक-वनस्पतिकाय समझना चाहिये; प्रत्येक वनस्पतिकाय जीवके सात भेद हैं;–फल, पुष्प, छाल, काष्ठ, मूलियां, पत्ते और बीज।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

"पृथ्वीकाय आदि जीवों के विषयमें कुछ विशेष कहते हैं"

पत्तेयं तरुमोत्तुं, पंचवि पुढवाइणो सयललोए।
सुहुमा हवंति नियमा, अंतमुहुत्ताउ अद्दिस्सा।१४

(पत्तेयं तरु) प्रत्येक-वनस्पतिकायको (मोत्तुं) छोड़कर, (पंचवि) पांचों ही (पुढवाइणो) पृथ्वीकाय आदि, (सुहुमा) सूक्ष्म-स्थावर (सयल लोए) सम्पूर्ण लोकमें (हवंति) विद्यमान हैं-रहते हैं-और वे (नियमा) नियमसे (अन्तमुहुत्ताउ) अन्तर्मुहूर्त आयुष्यवाले होते हैं, तथा (अद्दिस्सा) अदृश्य हैं-आंखसे देखने में नहीं आते ॥१४॥

भावार्थ—प्रत्येक वनस्पतिकायको छोड़कर पृथ्वीकाय आदि पांचों ही सूक्ष्म-स्थावर सम्पूर्ण लोक में भरे पड़े हैं। उनकी आयु अन्तर्मुहूर्तकी होती है तथा वे इतने छोटे हैं कि आंख उन्हें नहीं देख सकती।

प्र० अन्तर्मुहूर्त किसे कहते हैं?

उ०—नव समयसे लेकर, एक समय कम, दो घड़ी जितना काल अन्तर्मुहूर्त कहलाता है। नव समयों का अन्तर्मुहूर्त सबसे छोटा अर्थात् जघन्य है, और दो घड़ी में एक समय कम हो, तो वह अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट है, बीचके कालमें नव समय से आगे एक एक समय बढ़ाते जांय तो, उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त तक असंख्य अन्तर्मुहूर्त होते हैं।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्र०—समय किसे कहते हैं ?

उ०-उस सूक्ष्म कालको, जिसका कि सर्वज्ञ की दृष्टि में भी विभाग न हो सके।

प्र०-मुहूर्त किसे कहते हैं ?

उ०-दो घड़ी अर्थात् अड़तालीस मिनिटों का मुहूर्त होता है।

विशेष-प्रत्येकवनस्पतिकाय नियमसे बादर हैं, पाँच स्थावर, सूक्ष्म और बादर दो तरह के हैं, सबको मिलाकर ग्यारह भेद हुये, ये ग्यारह पर्याप्त और अपर्याप्तरूप से दो तरह के हैं, इस तरह स्थावरजीव के बाईस भेद हुये।

प्र०-पर्याप्त-जीव किसे कहते हैं ?

उ०-जोजीव अपनी पर्याप्तियां पूरी कर चुकाहो, उसे

प्र०-अपर्याप्त-जीव किसे कहते हैं ?

उ०-जो जीव अपनी पर्याप्तियां पूरी न कर चुका हो उसे।

प्र०-पर्याप्ति किसे कहते हैं ?

उ०-जीवकी उस शक्तिको-जिसके द्वारा जीव, आहार को ग्रहण कर रस, शरीर और इन्द्रियों को बनाता है तथा योग्य पुद्गलों को ग्रहण कर श्वासोच्छ्वास, भाषा और मनको बनाता है।

संख-कवड्डुय-गंडुल,

जलोयचंदणग-अलस-लहगाई।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मेहरि-किमि-पूयरगा,
बेइंदिय माइवाहाई ॥ १५ ॥

(संख) शङ्ख-दक्षिणावर्त आदि, (कवड्डय) कपर्दक-कौड़ी, (गडुल) गण्डोल पेटमें जो मोटे कृमि मल्हप पैदा होते हैं, (जलोय) जलौका-जोंक, (चंदणग) चन्दनक-अक्ष-जिसके निर्जीव शरीर को साधु लोग स्थापनाचार्यमें रखते हैं, (अलस) भूनाग जो वर्षा ऋतुमें सांप सरीखे लंबे लाल रंगके जीव पैदा होते हैं, (लहगाई) लहक-लालीयक-जो बासी रोटी आदि अन्न में पैदा होते हैं, (मेहरि) काष्ठके कीड़े, (किमि) कृमि-पेटमें, फोड़ेमें तथा बवासीर आदिमें पैदा होते हैं, (पूयरगा) पूतरक-पानी के कीड़े, जिनका मुँह काला और रंग लाल वा श्वेत-प्राय होता है, (माइवाहाई) मातृवाहिका-जिसकी गुजरात में अधिकता है और वहां के लोग चूडेल कहते हैं, इत्यादि (बेइन्दिय) द्वीन्द्रिय जीव हैं ॥१५॥

भावार्थ—जिन जीवों के त्वचा और जीभ हो, दूसरी इन्द्रियां न हों, वे जीव द्वीन्द्रिय कहलाते हैं, जैसे शंख कौड़ी, पेट के जीव, जोंक, अक्ष, भूनाग, लालीयक, काष्टकीट, कृमि, पूतरक और मातृवाहिका आदि।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

"अब दो गाथाओं से त्रीन्द्रिय जीव के भेद कहते हैं"

गोमी-मंकण-जूआ, पिपीलि-उद्देहिया य मक्कोडा।
इल्लिय-घयमिल्लीओ, सावय-गोकीड जाइओ॥१६॥
गद्दहय-चोरकीडा, गोमयकीडा य धन्नकीडा य।
कुंथु-गुवालिय-इलिया, तेइंदिय इंदगोवाई॥१७॥

(गोमी) गुल्मि-कानखजूरा, (मंकण) मत्कुण-खटमल, (जूआ) यूका-जूँ, (पिपीलि) पिपीलिका-चींटी, (उद्देहिया) उपदेहिका-दीमक, (मक्कोड़ा) मत्कोटक-मकोड़ा, (इल्लिय) इल्लिका-अल्ली, जो अनाज में पैदा होती है, (घयमिल्लीओ) घृतेलिका-जो घी में पैदा होती है, (सावय) चर्म-यूका-जो शरीर में पैदा होती है, जिससे भविष्य में अनिष्ट की शङ्का की जाती है, (गोकीड जाईओ) गोकीट की जातियां अर्थात् पशुओं के कान आदि अवयवों में पैदा होने वाले जीव॥१६॥ (गद्दहय) गर्दभक-गोशाला आदि में पैदा होने वाले सफेद रंग के जीव, (चोरकीडा) चोरकीट-विष्ठा के कीड़े, (गोमयकीडा) गोमयकीट-गोबर के कीड़े, (धन्नकीडा) धान्यकीट-अनाज के कीड़े, (कुन्थु) कुन्थु-एक किस्म का कीड़ा, (गुवालिय) गोपालिका-एक किस्म का अप्रसिद्ध जीव, (इलिया) ईलिका-जो शक्कर और चावल में पैदा होती है, (इंदगोवाई) इन्द्रगोप जो वर्षा में

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लाल रंग का जीव पैदा होता है जिसे पञ्जाबी चीजऊहोटी और गुजराती गोकलगाय कहते हैं- इत्यादि (तेइंदिय) त्रीन्द्रिय जीव हैं ॥१७॥

भावार्थ–जिन जीवोंको सिर्फ़ शरीर, जीभ और नाक हो, उनको त्रीन्द्रिय कहते हैं, वे ये हैं:-कानखजूरा, खटमल, जूँ, चींटी, दीमक, अनाजमें पैदा होने वाली अल्ली मकोड़ा, घीमें पैदा होनेवाला जीव, शरीर में पैदा होने वाली चर्मजूँ, गाय के कान आदि में पैदा होने वाले कीड़े, गोशाला में पैदा होने वाले जीव, विष्ठा के कीड़े, गोबर के कीड़े, अनाज के कीड़े, कुन्थु, गोपालका, शक्कर और चावल में पैदा होने वाले जीव, इन्द्रगोप आदि।

"चतुरिन्द्रिय जीवों के भेद कहते हैं"

चउरिंदया य विच्छू,
ढिंकुण-भमरा य भमरिया-तिड्डा।
मच्छिय-डंसा-मसगा,
कंसारी-कविलडोलाई ॥१८॥

(विच्छू) बिच्छू, (ढिंकुण) ढिंकुण–घुड़साल आदि में पैदा होता है, (भमरा) भ्रमर-भौंरा, (भमरिया) भ्रमरिका-बर्रे, (तिड्डा) टिड्डी–टीढ़ी, (मच्छिय) मक्षिका–मक्खी, मधुमक्खी, (डंसा) दंश–डांस; (मसगा)

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मशक-मच्छर, (कंसारी) कंसारिका-जो उजाड़ जगहमें पैदा होती है, (कविलडोलाई) कपिलडोलक-एक किस्म का जीव जिसे गुजराती खड़माँकड़ी कहते हैं, इत्यादि (चउरिंदिया) चतुरिन्द्रिय जीव हैं ॥१८॥

भावार्थ-जिन जीवों को शरीर, जीभ, नाक और आंख हो, वे चतुरिन्द्रिय कहलाते हैं, जैसे:-बिच्छू, घुड़साल में पैदा होने वाला ढिंकुण नामक जीव, भौंरा, बर्रें, मक्खी, मधुमक्खी, डांस, मच्छर, टीड़ी, कंसारिका, कपिलडोलक आदि।

"अब पञ्चेन्द्रिय जीवों के भेद कहते हैं"

पंचिंदिया य चउहा, नारय-तिरिया-मणुस्स-देवाय
नेरइया सत्तविहा, नायव्वा पुढविभेएणं ॥२६॥

(पंचिंदिया) पञ्चेन्द्रिय जीव (चउहा) चतुर्धा-चार प्रकारके हैं (नारय) नारक, (तिरिया) तिर्यञ्च (मणुस्स) मनुष्य (य) और (देवा) देव, (नेरइया) नैरयिक-नरक में रहने वाले जीव (पुढविभेएणं) पृथ्वी के भेद से (सत्तविहा) सप्तविधा-सात प्रकार के (नायव्वा) जानना ॥१६॥

भावार्थ-पञ्चेन्द्रिय जीव के चार भेद हैं:-नारक, तिर्यञ्च, मनुष्य और देव, भिन्न भिन्न सात स्थानों में पैदा होने के कारण नारक जीव सात प्रकार के

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हैं, उन सात स्थानों के नरकों के नाम ये हैं:-रत्न-प्रभा, शर्कराप्रभा, वालुकाप्रभा, पङ्कप्रभा, धूम-प्रभा, तमःप्रभा और तमस्तमप्रभा।

"पञ्चेन्द्रिय जीवों में नारकों के भेद कहकर अब चार गाथाओं से पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च और मनुष्यों भेद कहते हैं।"

"पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च के भेद"

जलयर-थलयर-खयरा,
तिविहा पंचेंदिया तिरिक्खा य।
सुसुमार-मच्छ-कच्छव,
गाहा-मगराइ जलचारी ॥२०॥

(जलयर) जलचर, (थलयर) स्थलचर (खयरा) खेचर (पञ्चेंदिया) पञ्चेन्द्रिय (तिरिक्खा) तिर्यञ्च (तिविहा) त्रिविध अर्थात् तीन प्रकार के हैं,(जल-चारी) जल में रहने वाले (सुसुमार) शिशुमार–सुईस,जिसका आकार भैंस जैसा होता है,(मच्छ) मत्स्य–मछली, (कच्छव) कच्छप–कछुआ, (गाहा) ग्राह–घड़ियाल,(मगराइ) मकर–मगर आदि हैं॥२०॥

भावार्थ–पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च के तीन भेद हैं:–जल-चर स्थलचर और खेचर,जलचर जीव ये हैं:–सुईस, मछली, कछुआ, ग्राह, मकर आदि।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

" अब स्थलचर जीवों के भेद कहते हैं "

चउपय-उरपरिसप्पा,
भुयपरिसप्पा य थलयरा तिविहा ।
गो-सप्प-नउल-पमुहा,
बोधव्वा ते समासेणं ॥२१॥

(थलयरा) स्थलचर जीव (तिविहा) त्रिविध अर्थात् तीन प्रकार के हैं; (चउपय) चतुष्पद-चार पैर से चलने वाले, (उरपरिसप्पा) उरःपरिसर्प-छातीसे-पेट से चलने वाले (य) और (भुयपरिसप्पा) भुज-परिसर्प-भुजाओं से चलने वाले, (गो) गाय, (सप्प) साँप, (नउल) नकुल-न्योला, (पमुहा) प्रमुख-आदि (ते) वे (समासेणं) समास से-संक्षेप से (बोधव्वा) जानने ॥२१॥

भावार्थ—जमीन पर चलने वाले जीव-जिनको स्थलचर कहते हैं-तीन प्रकार के होते हैं, (१) चार पैर से चलने वाले गाय, भैंस आदि; (२) पेट से चलने वाले सर्पादि, (३) भुजाओं से चलने वाले नकुल-न्योला आदि । क्रमशः इन तीनों को चतुष्पद, उरःपरिसर्प और भुजपरिसर्प कहते हैं ।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

"अब खेचर जीवों के भेद कहते हैं"

खयरा-रोमय-पक्खी,
चम्मयपक्खी य पायडा चेव ।
नरलोगाओ बाहिं,
समुग्गपक्खी वियपक्खी ॥२२॥

(खयरा) खेचर-आकाश में उड़ने वाले जीव (रोमयपक्खी) रोमजपक्षी (य) और (चम्मयपक्खी) चर्मजपक्षी (पायडा) प्रकट हैं-प्रसिद्ध हैं, (नरलोगाओ) नरलोक से-मनुष्य लोक से (बाहिं) बाहर (समुग्गपक्खी) समुद्गपक्षी और (वियपक्खी) विततपक्षी हैं ॥२२॥

भावार्थ-आकाश में उड़ने वाले तिर्यञ्च, खेचर कहलाते हैं, उनके दो भेद हैं:-रोमजपक्षी और चर्मजपक्षी । रोम से जिनके पङ्ख बने हैं वे रोमजपक्षी, जैसे तोता, हंस, सारस, आदि । चाम से जिनके पङ्ख बने हैं वे चर्मजपक्षी, जैसे-चमगादड़ आदि । जहां मनुष्य का निवास नहीं है उस भूमि में दो तरह के पक्षी होते हैं:-समुद्गपक्षी और विततपक्षी। सिकुड़े हुए जिनके डब्बे के समान पङ्ख हों वे समुद्गपक्षी, जिनके पङ्ख फैले हुए होंवे विततपक्षी कहलाते हैं ।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

"तीन प्रकार के तिर्यञ्च कह चुके उनके प्रत्येक के दो दो भेद कहते हैं"

सव्वे जल-थल-खयरा,
संमुच्छिमा गब्भया दुहा हुंति ।
कम्माकम्मगभूमि,
अंतरदीवा मणुस्सा य ॥२३॥

(सव्वे) सब (जलथलखयरा) जलचर, स्थलचर और खेचर (संमुच्छिमा) सम्मूर्च्छिम, (गब्भया) गर्भज (दुहा) द्विधा-दो प्रकार के (हुंति) होते हैं, (मणुस्सा) मनुष्य (कम्माकम्मग भूमि) कर्मभूमिज, अकर्मभूमिज (य) और (अंतरदीवा) अन्तर्द्वीपवासी हैं ॥२३॥

भावार्थ–पहले तिर्यञ्च के तीन भेद कहे हैं:-जलचर, स्थलचर और खेचर; ये तीनों दो दो प्रकार हैं; सम्मूर्च्छिम और गर्भज । जो जीव, मा-बाप के विना ही पैदा होते हैं, वे सम्मूर्च्छिम कहलाते हैं। जो जीव, गर्भ से पैदा होते हैं वे गर्भज। मनुष्य के तीन भेद हैं कर्मभूमिज, अकर्मभूमिज और अन्तर्द्वीपनिवासी। खेती, व्यापार आदि कर्म-प्रधान भूमि को कर्मभूमि कहते हैं। उसमें पैदा होने वाले मनुष्य कर्मभूमिज कहलाते हैं। कर्मभूमियां पन्द्रह हैं; पांच भरत पांच ऐरावत और पांच महाविदेह । जहां खेती, व्यापार आदि कर्म नहीं होता उस भूमि को

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अकर्मभूमि कहते हैं, वहां पैदा होने वाले मनुष्य अकर्मभूमिज कहलाते हैं; अकर्मभूमियों की संख्या तीस है। वह इस प्रकारः–ढाई द्वीप में पाँच मेरु हैं, प्रत्येक मेरु के दोनों तरफ़ अर्थात् उत्तर तथा दक्षिण की ओर १ हैमवंत, २ ऐरण्यवंत, ३ हरिवर्ष, ४ रम्यक ५ देवकुरु और ६ उत्तरकुरु, इन नामों की छह छह भूमियां हैं, इन छह भूमियों को पांच मेरुओं से गुणने पर तीस संख्या होती है। अन्तर्द्वीप में पैदा होने वाले मनुष्य अन्तर्द्वीपनिवासी कहलाते हैं, अन्तर्द्वीपों की संख्या छप्पन है वह इस प्रकारः– भरतक्षेत्र से उत्तर दिशा में हिमवान् नामक पर्वत है, वह पूर्व दिशा में तथा पश्चिम दिशा में लवण-समुद्र तक लम्बा है, इस की पूर्व तथा पश्चिम में दो दो दंष्ट्राकार भूमियां समुद्र के भीतर हैं, इस तरह पूर्व तथा पश्चिम की चार दंष्ट्रायें हुईं; इसी प्रकार ऐरावतक्षेत्र से उत्तर शिखरी नामक पर्वत है, वह भी पूर्व तथा पश्चिम में समुद्र तक लम्बा है और दोनों दिशाओं में दो दो दंष्ट्राकार भूमियां समुद्र के अन्दर घुसी हैं, दोनों की आठ दंष्ट्रायें हुईं, हरएक दंष्ट्रा में सात सात अन्तर्द्वीप हैं, सात को आठ के गुणने पर छप्पन संख्या हुई।

विशेष–कर्मभूमि, अकर्मभूमि और अन्तर्द्वीप, ये सब ढाई द्वीपमें हैं। जम्बूद्वीप, धातकीखण्ड और पुष्करवर-

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

द्वीपका आधा भाग, इनको ढाई द्वीप कहते हैं, इस ढाई द्वीप में ही मनुष्य पैदा होते हैं तथा मरते हैं, इसलिये इस को 'मनुष्यक्षेत्र' कहते हैं, इसका परिणाम पैंतालीस लाख योजन है। अकर्मभूमि और अन्तर्द्वीपमें जो मनुष्य रहते हैं, उन्हें 'युगलिया' कहते हैं, इसका कारण यह है कि स्त्री-पुरुषका युग्म—जोड़ा-साथ ही पैदा होताहै और उनका वैवाहिक सम्बन्ध भी परस्पर ही होताहै इनकी ऊंचाई आठसौ धनुषकी; और आयु, पल्योपमका असंख्यातवां भाग जितनी है. पन्द्रह कर्मभूमियां, तीस अकर्मभूमियां और छप्पन अन्तर्द्वीप, इन सबको मिलानेसे एकसौ एक मनुष्य भूमियां हुईं, इनमें पैदा होनेसे मनुष्योंके भी उतनेही भेद हुए. इन के भी पर्याप्त और अपर्याप्त रूपसे दो भेद हैं, इसलिये दो सौ दो भेद हुए. इन गर्भज मनुष्योंके मल, मूत्र, कफ आदिमें जो मनुष्य पैदा होते हैं, वे संमूर्च्छिम कहलाते हैं तथा वे अपनी पर्याप्ति पूरी किये बिनाही मर जाते हैं; इनके-संमूर्च्छिम मनुष्यके-एकसौ एक भेदोंके साथ दोसौ दोको मिलाने से मनुष्योंके तीन सौ तीन भेद होते हैं.

"अब चार प्रकार के देवताओंके भेद कहते हैं."

दसहा भवणाहिवई, अट्ठविहा वाणमंतरा हुंति।
जोइसिया पंचविहा, दुविहा वेमाणिया देवा॥२४॥

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

(भवणाहिवई)भवनाधिपति देवता, (दसहा) दश-धा-दस प्रकारके हैं, (वाणमंतरा) वानमन्तर देवता, (अट्ठविहा) अष्टविधा-आठ प्रकारके, (हुँति) होते हैं, (जोइसिया) ज्योतिष्का-ज्योतिष्क देवता, (पँचविहा) पञ्चविधा-पांच प्रकारके हैं और (वेमाणिया देवा) वैमानिक देवता, (दुविहा) दो प्रकार के हैं ॥२४॥

भावार्थ–भवनपति देवताओंके दस भेद हैं;–१ असुरकुमार, २ नागकुमार, ३ सुपर्णकुमार, ४ विद्युत्-कुमार, ५ अग्निकुमार, ६ द्वीपकुमार, ७ उदधिकुमार, ८ दिक्कुमार, ९ वायुकुमार, और १० स्तनितकु-मार। वानमन्तर-वाणव्यन्तर-देवताओंके आठ भेद हैं:–१ पिशाच, २ भूत, ३ यक्ष, ४ राक्षस, ५ किन्नर, ६ किंपुरुष, ७ महोरग, और ८ गान्धर्व वाणव्यन्तर (वानमन्तर)के ये भी आठ भेद हैं:–१ अणपन्नी २ पण-पन्नी, ३ इसीवादी, ४ भूतवादी, ५ कन्दित, ६ महा-कन्दित, ७ कोहण्ड और ८ पतङ्ग, ज्योतिष्क देव-ताओंके पांच भेद हैं:–१ चंद्र, २ सूर्य, ३ ग्रह, ४ न-क्षत्र, और ५ तारा. वैमानिक देवता दो प्रकार के हैं:–१ कल्पोपपन्न, और २ कल्पातीत. कल्प अर्थात् आचार–तीर्थङ्करोंके पांच कल्याणकमें आना-जाना, उसकी रक्षा करने वाले देवता, 'कल्पोपपन्न' कह-लाते हैं. उक्त आचारके पालन करनेका अधिकार जिन्हें नहीं है, वे देव, 'कल्पातीत' कहलाते हैं. कल्पो-

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पपन्न देवताओंके बारह लोक हैं. इसलिये स्थान के भेदसे उन देवोंके भी बारह भेद समझना चाहिये. बारह लोक ये हैं;-१ सौधर्म, २ ईशान, ३ सनत्कुमार, ४ माहेन्द्र, ५ब्रह्म, ६ लान्तक, ७ शुक्र, ८ सहस्रार, ९आनत,१० प्राणत, ११ आरण और १२ अच्युत, कल्पातीत देवोंके चौदह भेद हैं;-नवग्रैवेयकमें रहनेवाले तथा पांच अनुत्तरविमानमें रहने वाले. नवग्रैवेयकोंके नाम येहैं;-१ सुदर्शन, २ सुप्रबुद्धि, ३ मनोरम, ४ सर्वतोभद्र, ५ विशाल, ६ सुमनस,७ सौमनस ८ प्रियङ्कर, और ९ नन्दिकर.पांच अनुत्तरविमानोंके नाम ये हैं;-१ विजय, २ वैजयन्त, ३ जयन्त, ४ अपराजित. और ५ सर्वार्थसिद्ध. अब उक्त देवोंके स्थान-रहनेकी जगह-संक्षेपमें कहते हैं;-मेरु पर्वतके मूलमें समतल पृथ्वी है, उससे नीचे रत्नप्रभा नामक प्रथम नरकका दल एकलाख अस्सी हजार योजन मोटा है, उसमें तेरह प्रतर हैं, उन प्रतरोंमें बारह आन्तर-स्थान हैं, प्रथम और अन्तिम आन्तर-स्थानोंको छोड़कर बाकीके दस आंतर-स्थानों में, हर एक में एक एक भवनपति देवों के निकाय रहते हैं प्रत्येक निकायमें दक्षिणकी तरफ एक, और उत्तरकी तरफ एक, ऐसे दो इन्द्र होते हैं, इस तरह दस निकायों के बीस इन्द्र हुए.

पहले कहा गया है कि रत्नप्रभाका दल एक लाख अस्सी हजार योजन मोटा है,ऊपर एक हजार और

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नीचे एक हजार योजन पृथ्वीको छोड़कर बाकी के एकलाख अठहत्तर हजार योजनमें पूर्वोक्त तेरह प्रतर हैं, जिनमें कि दस प्रकार के भवनपति देव रहते हैं, ऊपर के बचे हुए एक हजार योजन में सौ योजन ऊपर, और सौ योजन नीचे छोड़ दिये जाने पर बाकी आठसौ योजन बचे, उनमें आठ व्यंतर निकायहैं; प्रत्येक निकायमें, भवनपति निकाय की तरह, दक्षिणमें एक, और उत्तरमें एक, ऐसे दो इंद्र रहते हैं. इस तरह आठ व्यंतर निकायके सोलह इंद्र हुए. ऊपर जो सौ योजन छोड़ दिये गये थे, उनमेंसे दस योजन ऊपर, और दस योजन नीचे छोड़ दिये जाने पर अस्सी योजन बचे, उनमें आठ प्रकार के वाणमन्तर देव रहते हैं; प्रत्येक निकायमें पहलेकी तरह एक दक्षिणमें, और एक उत्तरमें ऐसे दो इंद्र रहते हैं, इस प्रकार आठ निकायोंके सोलह इंद्र हुए. दोनों प्रकारके व्यंतरोंके बत्तीस इंद्र हुए। इनमें भवनपतिके बीस इंद्रोंके मिलानेपर बावन इंद्र हुए. अब ज्योतिष्क देवोंके रहनेकी जगह कहते हैं पहले ज्योतिष्क देवोंके पांच भेद कह चुकेहैं उनके और भी दो भेद हैं, एक 'चर' और दूसरे 'स्थिर'; मनुष्य क्षेत्रमें जो ज्योतिष्क देव हैं, वे चर हैं, अर्थात् हमेशा घूमते रहते हैं और मनुष्य लोक से बाहर के ज्योतिष्क देव स्थिर हैं अर्थात् उनके विमान एकही जगह रहते हैं, जहां पर कि वे हैं। चंद्र, सूर्य,

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ग्रह, नक्षत्र और तारा, इन पांच ज्योतिष्क देवोंमें, चंद्र और सूर्य, इन दोनोंकी इन्द्र पदवी है अर्थात् ये दोनों, ज्योतिष्कोंमें इंद्र कहलाते हैं, दूसरों को इन्द्र पदवी नहीं है, मेरुके समतल-मूलसे ऊपर सात सौ नब्बे योजनकी ऊंचाई पर ताराओं के विमान हैं, वहांसे दस योजनकी ऊंचाईपर सूर्यका विमान है, वहांसे अस्सी योजनकी ऊंचाईपर चंद्र का विमान है, वहांसे चार योजनकी ऊंचाईपर नक्षत्रोंके विमान हैं. वहांसे सोलह योजनपर दूसरे दूसरे ग्रहोंके विमान हैं, तात्पर्य यह है कि मेरुके मूलकी सपाट-भूमि से सातसौ नब्बे योजनके ऊपर एकसौ दस योजनोंमें ज्योतिष्क देव रहते हैं। अब वैमानिक देवोंके स्थान कहते हैं;—सम्पूर्णलोक-जिसे त्रिभुवन कहते हैं-उसका आकार पुरुष के समान है और उसकी लम्बाई चौदह राजू है, नीचेकी सात राजुओंमें सात नरक हैं। नाभिकी जगह-मध्यमें-मनुष्य लोक है। मेरु की-सपाटभूमि से सात सौ नब्बे योजन पर ज्योतिष्क देवोंके विमान हैं, वहां से लगभग एक राजू ऊपर दक्षिण दिशामें सौधर्म देवलोक और उत्तर दिशामें ईशान देवलोक परस्पर जुड़े हुए हैं, वहांसे कुछ दूर ऊपर, दक्षिणमें तृतीय देवलोक सनत्कुमार और उत्तर में चौथा देवलोक माहेन्द्र, एक दूसरेसे लगे हुए हैं, वहांसे ऊपर पांचवां ब्रह्मलोक, छठा लांतक, सातवां शुक्र, आठवां सहस्रार ये चार देवलोक,

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कुछ कुछ अंतरपर, क्रमसे एकपर एक, ऐसी स्थिति में हैं; वहांसे कुछ ऊंचाई पर नववां आनत और दसवां प्राणत, दक्षिण और उत्तर में, एक दूसरे से लगे हुए हैं; वहांसे कुछ ऊंचाई पर, ग्यारहवां आरण और बारहवां अच्युत, दक्षिण तथा उत्तर दिशाओं में एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। प्रथम के आठ देवलोकों के आठ इन्द्र हैं अर्थात् हर एक देवलोक का एक एक इन्द्र है; पर नववें और दसवें देवलोकका एक तथा ग्यारवें और बारहवें देवलोक का एक, इस प्रकार अन्तिम चार देवलोकोंके दो इन्द्र हैं; प्रथम के आठ मिलाने से कल्पोपपन्न वैमानि देवताओं के दस इन्द्र हुए। पुरुषाकार लोकके गले के स्थान में नवग्रैवेयक हैं, वहाँ से कुछ ऊपर पाँच अनुत्तर-विमान हैं। लोकरूप पुरुषके ललाट की जगह सिद्ध-शिला है, जो स्फटिक के समान निर्मल है, वहां से एक योजन पर लोक का अन्त होता है, लोक के अन्तिम भाग में सिद्ध जीवों का निवास है। अब तीन प्रकार के किल्विषिक देव तथा नव प्रकार के लोका-न्तिक देवों का निवासस्थान कहते हैं। प्रथम प्रकार के किल्विषिकों की तीन पल्योपम आयु है और वे पहले तथा दूसरे देवलोक के नीचे रहते हैं। दूसरे प्रकार के किल्विषिकों की आयु, तीन सागरोपम की है और वे तीसरे तथा चौथे देवलोक के नीचे रहते हैं। तीसरे प्रकार के किल्विषिकों की आयु

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तेरह सागरोपम है और वे पांचवें तथा छठे देव-लोक के नीचे रहते हैं। ये सब किल्विषिक देव, चाण्डाल के समान, देवों में नीच समझे जाते हैं, लोकान्तिक देव, पाँचमें देवलोक के अन्त में उत्तर-पूर्व के कोण में रहते हैं। चौसठ इन्द्रः-भवनपति देवों के बीस, व्यन्तरों के बत्तीस, ज्योतिषियों के दो और वैमानिक देवों के दस, सब की संख्या मिलाने पर इन्द्रों की चौसठ संख्या होती है।

"जीवों के पाँचसौ तिरेसठ (५६३) भेद"

शास्त्र में देवों के १९८ भेद कहे हैं, उनको इस तरह समझना चाहियेः-भवनपति के दस, चर ज्योतिष्क के पाँच, स्थिर ज्योतिष्क के पाँच, वैताढ्य पर रहने वाले तिर्यक् जम्भक देवों के दस भेद, नरक के जीवों को दुःख देने वाले परमाधामी के पन्द-रह भेद, व्यन्तर के आठ भेद, वानव्यन्तर के आठ भेद, किल्विषियों के तीन भेद, लोकान्तिक नव भेद, बारह देवलोकों के बारह भेद, नव ग्रैवेयकों के नव भेद, पांच अनुत्तर विमानों के पांच भेद सब मिला कर ९९ भेद हुए इनके भी पर्याप्त और अपर्याप्त रूप से दो भेद हैं, इस प्रकार १९८ भेद देवों के होते हैं। मनुष्यों के ३०३ भेद पहले कह चुके।

अब तिर्यंच के ४८ भेद कहते हैं:-पांच सूक्ष्म स्थावर, पाँच बादर स्थावर, एक प्रत्येक वनस्पति-काय और तीन विकलेन्द्रिय सब मिला कर चौदह

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हुए, ये चौदह पर्याप्त और अपर्याप्त रूप से दो प्रकार के होते हैं, इस तरह अट्ठाइस हुए; जलचर, खेचर तथा स्थलचर के तीन भेदः-चतुष्पद, उरःपरिसर्प तथा भुजपरिसर्प, ये प्रत्येक संमूर्च्छिम और गर्भज होने से दस भेद हुए; ये दसों पर्याप्त और अपर्याप्त रूप से दो प्रकार के हैं, इसलिये बीस भेद हुए, इनमें पूर्वोक्त अट्ठाइस भेदों के मिलाने पर तिर्यञ्चों के ४८ भेद होते हैं।

नारक जीवों के सात भेद कह चुके हैं, वे पर्याप्त तथा अपर्याप्त रूप से दो तरह के हैं, इस तरह नारक जीवों के चौदह भेद होते हैं। देवों के १९८, मनुष्यों के ३०३, तिर्यंचों के ४८ और नारकों के १४ भेद, इन सबको मिलाने से ५६३ भेद, संसारी जीव के हुए।

"अब सिद्ध जीवों के भेद कहते हैं"

सिद्धा पनरसभेया, तित्थ-अतित्थाइ-सिद्ध भेएणं।
एए संखेवेणं, जीवविगप्पा समक्खाया ॥२५॥

(तित्थ अतित्थाइ सिद्ध भेएणं) तीर्थङ्कर-सिद्ध, अतीर्थङ्कर-सिद्ध आदि भेदों से, (सिद्धा) सिद्ध-जीवों के (पनरस भेया) पन्द्रह भेद हैं, (संखेवेणं) संक्षेप से, (एए) ये पूर्वोक्त, (जीवविगप्पा) जीव-विकल्प–जीवों के भेद, (समक्खाया) कहे गये ॥२५॥

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भावार्थ—तीर्थङ्कर-सिद्ध, अतीर्थङ्कर-सिद्ध आदि सिद्धों के पन्दरह भेद "नवतत्त्व" में कहे हैं, उसे देख लेना चाहिये. संक्षेप में जीवों के भेद इस ग्रन्थ में कहे गये हैं।

"अब आगे जो कहना है उसे खुद ग्रन्थकार गाथा-द्वारा कहते हैं"

एएसिं जीवाणं, सरीरमाऊ-ठिई सकायंमि।
पाणा जोणिपमाणं, जेसिं जं अत्थि तं भणिमो।२६।

(एएसिं) इन-पूर्वोक्त (जीवाणं) जीवों के; (सरीरं) शरीर-प्रमाण,(आऊ) आयु-प्रमाण, (सकायंमि) स्वकाया में, (ठिई) स्थिति का प्रमाण अर्थात् स्वकायस्थिति-प्रमाण, (पाणा) प्राण-प्रमाण और (जोणिपमाणं) योनि-प्रमाण, (जेसिं) जिनके, (जं अत्थि) जितने हैं, (तं) उसे,(भणिमो) कहते हैं॥२६॥

भावार्थ—पहले एकेन्द्रिय आदि जीव कहे गये हैं, उनके शरीर का प्रमाण, आयु का प्रमाण, स्वकाय-स्थिति का प्रमाण—एकेन्द्रियादि जीवों का मरकर फिर उसी काय में पैदा होना, 'स्वकायस्थिति' कहलाता है उसका प्रमाण; प्राण-प्रमाण—दस प्राणों में से अमुक जीव को कितने प्राण हैं इसकी गिनती; योनि-प्रमाण—चौरासी लाख योनियों में से किन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

किन जीवों को कितनी कितनी योनियां हैं इस विषय की गिनती;-ये बातें आगे कही जायँगी ।

"पहले, शरीर-प्रमाण कहते हैं ।"

अंगुलअसंखभागो, सरीरमेगिंदियाण सव्वेसिं ।
जोयणसहस्समहियं,नवरं पत्तेयरुक्खाणं ॥२७॥

(सव्वेसिं) सम्पूर्ण (एगिंदियाण) एकेन्द्रियों का (सरीरं) शरीर (अंगुलअसंभागो) उँगली के असंख्यातवें भाग जितना है, (नवरं) लेकिन (पत्तेय-रुक्खाणं) प्रत्येक वनस्पतियों का शरीर,(जोयणसह-स्समहियं) हज़ार योजन से कुछ अधिक है ॥२७॥

भावार्थ—सूक्ष्म तथा बादर पृथ्वीकाय आदि एके-न्द्रिय जीवों का शरीर-प्रमाण, उँगली के असंख्या-तवें भाग जितना है,लेकिन प्रत्येक वनिस्पतिकाय के जीवों का शरीर-प्रमाण, हज़ार योजन से कुछ अधिक है; यह प्रमाण समुद्र के पद्मनाल का तथा ढाई द्वीप से बाहर की लताओं का है ।

"अब द्वीन्द्रिय आदि विकलेन्द्रिय जीवों का शरीर-प्रमाण कहते हैं"

बारस जोयण तिन्ने,
व गाउआ जोयणं च अणुकमसो ।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बेइंदिय तेइंदिय,
चउरिंदिय देहमुच्चत्तं ॥२८॥

(वेइंदिय) द्वीन्द्रिय, (तेइंदिय) त्रीन्द्रिय और (चउरिंदिय) चतुरिन्द्रिय जीवों के, (देहमुच्चत्तं) शरीरका प्रमाण, (अणुकमसो) क्रमसे (बारसजोयण) बारह योजन, (तिन्नेव गाउआ) तीन गव्यूत-तीन कोस-और (जोयणं) एक योजन है ॥२८॥

भावार्थ-द्वीन्द्रिय जातिके जीवों का शरीर-प्रमाण, अधिक से अधिक, बारह योजन हो सकता है, इससे अधिक नहीं। इसका मतलब किसी द्वीन्द्रिय जाति से है, कुल द्वीन्द्रियों से नहीं; ऐसा ही त्रीन्द्रिय जीवों का शरीर-प्रमाण तीन कोस और चतुरिन्द्रिय जीवों शरीर-प्रमाण एक योजन है।

प्र०-योजन किसे कहते हैं ?

उ०-चार कोस का एक योजन होता है।

प्र०-गव्यूत किसे कहते हैं ?

उ०-एक कोस को।

"अब नारक जीवों का शरीर-प्रमाण कहते हैं"

धणुसयपंचपमाणा, नेरइया सत्तमाइपुढवीए।
तत्तो अद्धद्धूणा, नेया रयणप्पहा जाव ॥२९॥

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

(सत्तमाइ) सातवीं (पुढवीए)पृथ्वी के (नेरइया) नारक-जीव, (धणुसयपंचपमाणा) पांच सौ धनुष प्रमाण के हैं, (रयणप्पहा जाव) रत्नप्रभा नामक प्रथम पृथ्वीतक, (तत्तो) उससे (अद्धद्धूणा) आधा आधा कम प्रमाण (नेया) समझना ॥२६॥

भावार्थ–सातवें नरक के जीवों का शरीर-प्रमाण पाँचसौ धनुष, छट्ठे नरक के जीवों का शरीर-प्रमाण ढाइसौ धनुष, पाँचवें नरक के जीवों का एक सौ पचीस धनुष, चौथे नरक के जीवों का साढ़े बासठ धनुष, तीसरे नरक के जीवों का सवा इकतीस धनुष, दूसरे नरक के जीवों का साढ़े पन्द्रह धनुष और बारह अंगुल, तथा प्रथम नरक के जीवों का शरीरप्रमाण पौने आठ धनुष और छः अंगुल है, नारकों के उत्तरवैक्रिय शरीर का प्रमाण उक्त प्रमाण से दुगुना समझना चाहिये।

प्र०–धनुष का क्या प्रमाण है ?

उ०–चार हाथ का एक धनुष समझना चाहिये।

"पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चों का शरीर-प्रमाण :"

जोयणसहस्समाणा, मच्छा उरगा य गब्भया हुंति
धणुअपुहुत्तं पक्खिसु, भुयचारी गाउअपुहुत्तं ॥३०॥
खयरा धणुअपुहुत्तं, भुयगा उरगा य जोयणपुहुत्तं।
गाउअपुहुत्तमित्ता, समुच्छिमा चउप्पया भणिया ३१

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

(गब्भया) गर्भज, (मच्छा) मत्स्य-मछलियां, (य) (उरगा) सांप आदि, अधिक से अधिक, (जोयणसहस्समाणा) हजार योजन प्रमाण वाले (हुंति) होते हैं. (पक्खिसु) पक्षियों में शरीर प्रमाण (धणुअपुहुत्तं) धनुष-पृथक्त्व है तथा (भुयचारी) भुजचारी-भुजाओं से चलने वाले (गाउअपुहुत्तं) गव्यूत-पृथक्त्व प्रमाण शरीर के होते हैं ॥३०॥

(समुच्छिमा) सम्मूर्च्छिम (खयरा) खेचर जीव (भुयगा) और भुजाओं से चलने वाले जीव (धणुअपुहुत्तं) धनुष-पृथक्त्व-प्रमाण वाले होते हैं (य) और (उरगा) सांप आदि (जोयण पुहुत्तं) योजन-पृथक्त्व शरीर-प्रमाण के होते हैं. (चउप्पया) चतुष्पद जीव (गाउअपुहुत्तमित्ता) गव्यूत-पृथक्त्वमात्र (भणिया) कहे गये हैं ॥३१॥

भावार्थ–गर्भज मत्स्य और सर्प का शरीर-मान एक हज़ार योजन का है; इस प्रकार के मत्स्य स्वयम्भूरमण समुद्र में होते हैं तथा सर्प मनुष्य-क्षेत्र से बाहर होते हैं. गर्भज पक्षियों का शरीर-मान धनुष-पृथक्त्व है अर्थात् दो धनुष से लेकर नव धनुष तक है. गर्भज न्योला, गोह आदि भुजपरिसर्प जीवों का शरीर-मान, गव्यूत-पृथक्त्व है अर्थात् दो कोस से लेकर नव कोस तक है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सम्मूर्च्छिम खेचर तथा भुजपरिसर्प जीवों का शरीर-मान, धनुष-पृथक्त्व है. सम्मूर्च्छिम उरः-परिसर्प जीवों का शरीर-मान, योजन-पृथक्त्व है. सम्मूर्च्छिम चतुष्पद्–चार पैर वाले जीवों का शरीर-मान गव्यूत-पृथक्त्व है।

प्र० -पृथक्त्व किसको कहते हैं?

उ० -दो से लेकर नव तक की संख्या को पृथक्त्व कहते हैं।

"गर्भज चतुष्पद तिर्यञ्च तथा मनुष्य का शरीर-मान।"

छच्चेव गाउआइं, चउप्पया गब्भया मुणेयव्वा।
कोसतिगं च मणुस्सा, उक्कोससरीरमाणेणं ॥३२॥

(चउप्पया गब्भया) चतुष्पद गर्भजों का शरीर-मान (छच्चेव गाउआइं) छहः कोस का (मुणेयव्वा) जानना (च) और (मणुस्सा) मनुष्य (उक्कोससरीर-माणेणं) उत्कृष्ट शरीर-मान से (कोसतिगं) तीन कोस के होते हैं ॥३२॥

भावार्थ–देवकुरु आदि क्षेत्रों में चतुष्पद गर्भज हाथी का शरीर-मान छः कोस का है तथा देवकुरु आदि के युगली मनुष्यों के शरीर की ऊँचाई, अधिक से अधिक तीन कोस की होती है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

"देवों का स्वाभाविक शरीर-मान।"

ईसाणंत सुराणं,
रयणीओ सत्त हुंति उच्चत्तं ।
दुग-दुग-दुग-चउ-गेवि,-
जणुत्तरे इक्किक्क परिहाणी ॥२३॥

(ईसाणंत) ईशानान्त-ईशान देवलोक तक के (सुराणं) देवताओं की (उच्चत्तं) ऊँचाई (सत्त) सात (रयणीओ) रत्नि-हाथ (हुंति) होती है, (दुग-दुग-दुग-चउगेविज्जणुत्तरे) दो, दो, दो, चार, नवग्रैवेयक और पांच अनुत्तरविमानों के देवों का शरीर-मान (इक्किक्क परिहाणी) एक एक हाथ कम है ॥२३॥

भावार्थ-दूसरा देवलोक ईशान है, वहां के देवों का तथा भवनपति, व्यन्तर, ज्योतिषी और सौधर्म देवों का शरीर सात हाथ ऊँचा है; सनत्कुमार और माहेन्द्र के देवों का शरीर छः हाथ ऊँचा है; ब्रह्म और लान्तक के देवों का पांच हाथ, शुक्र और सहस्रार के देवों का चार हाथ; आनत, प्राणत, आरण और अच्युत इन चार देवलोकों के देवों का तीन हाथ; नवग्रैवेयक के देवों का दो हाथ और पांच अनुत्तर विमानवासी देवोंका एक हाथ ऊँचा है।

यहां जीवों का शरीर-मान उत्सेधांगुल से समझना चाहिये ।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्र०-उत्सेधांगुल किसको कहते हैं ?

उ०-आठ यवों का-जवों का-एक उत्सेधांगुल होता है।

"अब आयु-प्रमाण कहते है।"

बावीसा पुढवीए, सत्तय आउस्स तिन्न वाउस्स
वास सहस्सा दस तरु, गणाण तेऊ तिरत्ताऊ ३४

(पुढवीए) पृथ्वीकाय जीवों की आयु (बावीसा) बाईस हज़ार वर्ष की है (आउस्स) अप्काय जीवों की आयु (सत्तय) सात हज़ार वर्ष की (वाउस) वायुकाय जीवों की आयु (तिन्नि) तीन हजार वर्ष की (तरु-गणाण) प्रत्येक वनस्पितिकाय के जीव समुदाय की आयु (वाससहस्सा दस) वर्ष सहस्र-दश अर्थात् दस हज़ार वर्ष की (तेऊ) तेजःकाय जीवों की (तरत्ताऊ) तीन अहोरात्र की आयु है ॥३४॥

भावार्थ-पृथ्वीकाय जीवों की अधिक से अधिक आयु-उत्कृष्ट आयु-बाईस हजार वर्ष; अप्काय जीवों की आयु सात हजार वर्ष; वायुकाय जीवों की तीन हजार वर्ष प्रत्येक वनस्पतिकाय जीवों की दस हजार वर्ष और तेजकाय जीवों की तीन अहोरात्र आयु है, यह तो हुई उत्कृष्ट आयु, लेकिन जघन्य आयु सबकी अन्तर्मुहूर्त की है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

"द्वीन्द्रिय आदि जीवों का आयु-प्रमाण ।"

वासाणि बारसाऊ, बिइंदियाणं तिइंदियाणं तु ।
अउणा पन्न दिणाइ, चउरिंदीणं तु छम्मासा॥३५॥

(बिइन्दियाणं) द्वीन्द्रिय जीवों की (आउ) आयु (बारस) बारह (वासाणि) वर्षकी है, (तिइंदियाणंतु) त्रीन्द्रिय जीवों की तो (अउणा पन्न दिणाइ) उनंचास दिन कीआयु होती है (चउरिंदीणं तु)और चउरिन्द्रिय जीवों की आयु (छम्मासा) छह: महीने की है ॥३५॥

भावार्थ—द्वीन्द्रिय जीवों की उत्कृष्ट आयु बारह वर्ष की, त्रीन्द्रियों की उनंचास दिन की और चतुरिन्द्रियकी छह: महीनेकी है. यह सबकी उत्कृष्ट आयु है, जघन्य आयु अन्तर्मुहूर्त की समझना चाहिये.

"चार प्रकार के पञ्चेन्द्रिय जीवों की उत्कृष्ट आयु तीन गाथाओं से कहते है." ।

सुर-नेरइयाण ठिई, उक्कोसा सागराणि तित्तीसं ।
चउपय-तिरिय-मणुस्सा, तिन्निय पलिओवमा हुंति

(सुर-नेरइयाण) देव और नारक जीवों की (उक्कोसा) उत्कृष्ट—अधिक से अधिक (ठिई) स्थिति-आयु (सागराणि तित्तीसं) तेतीस सागरोपम है. (चउपय-तिरिय) चार पैर वाले तिर्यञ्च और (मणुस्सा) मनुष्यों की आयु (तिन्निय) तीन (पलिओवमा) पल्योपम (हुंति) है ॥३६॥

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भावार्थ—देव और नरकवासी जीव, अधिक से अधिक, तेतीस सागरोपम तक जीते हैं और चतुष्पद तिर्यञ्च तथा मनुष्य तीन पल्योपम तक; ये तिर्यञ्च तथा मनुष्य देवकुरु आदि क्षेत्रों के समझना चाहिये. देव तथा नारक जीवों की जघन्य आयु–कम से कम आयु–दस हज़ार वर्ष की है; मनुष्य तथा तिर्यञ्च जीवों की जघन्य आयु, अन्तमुहूर्त की है।

जलयर-उरभुयगाणं,परमाऊ होइ पुव्वको डीऊ
पक्खीणं पुण भणियो,असंखभागो अ पलियस्स

(जलयर–उरभुयगाणं) जलचर, उरःपरिसर्प और भुजपरिसर्प जीवों की (परमाऊ) उत्कृष्ट आयु (पुव्वकोडीऊ) एक करोड़ पूर्व है, (पक्खीणं पुण) पक्षियों की आयु तो (पलियस्स) पल्योपमका (असंखभागो) असंख्यातवाँ भाग जितनी (भणियो) कही है ॥३७॥

भावार्थ—गर्भज और सम्मूर्च्छिम ऐसे दो प्रकार के जलचर जीवों की तथा गर्भज, उरःपरिसर्प और भुजपरिसर्प जीवों की उत्कृष्ट आयु एक करोड़ पूर्व है; गर्भज पक्षियोंकी आयु पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग जितनी है।

सव्वे सुहुमा साहा,—
रणा य संमुच्छिमा मणुस्सा य।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उक्कोस जहन्नेणं,
अंतमुहुत्तं चिय जियंति ॥३८॥

(सव्वे) सम्पूर्ण (सुहुमा) पृथ्वीकाय आदि सूक्ष्म (य) और (साहारणा) साधारण बनस्पतिकाय (य) और (संमुच्छिमा मणुस्सा) संमूर्च्छिम मनुष्य (उक्कोस जहन्नेणं) उत्कृष्ट और जघन्य से (अंतमुहुत्तं चिय) अन्तर्मुहूर्त ही (जियंति) जीते हैं ॥३८॥

भावार्थ—सूक्ष्म पृथ्वीकाय आदि जीव, सूक्ष्म और बादर साधारण बनस्पतिकाय के जीव और सम्मूर्छिम मनुष्य, उत्कर्ष से और जघन्य से सिर्फ़ अन्तर्मुहूर्त तक जीते हैं।

प्रश्न—पल्योपम किसको कहते हैं ?

उ०—असंख्य वर्षों का एक पल्योपम होता है।

प्र०—सागरोपम किसे कहते हैं ?

उ०—दस क्रोड़ा क्रोड़ी पल्योपम का एक सागरोपम होता है।

प्र०—पूर्व किसको कहते हैं ?

उ०—सत्तर लाख, छप्पन हज़ार करोड़ वर्षों का एक पूर्व होता है।

ओगाहणाउमाणं, एवं संखेवओ समक्खायं।
जे पुण इत्थ विसेसा, विसेस सुत्ताउ ते नेया॥३९॥

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

(एवं) इस प्रकार (ओगाहणाउयाणं) अवगाहना-शरीर और आयु का मान (संखेवओ) संक्षेप से (समक्खायं) कहा गया (जे पुण इत्थ) यहाँ जो बातें (विसेसा) विशेष हैं, (विसेस सुत्ताउ) विशेष सूत्रों से (ते) उनको (नेया) जानना ॥३९॥

भावार्थ—देह-मान तथा आयु-मान के विषय में विशेष बातें जानना हों, तो "संग्रहणी", "प्रज्ञापना" आदि सूत्रों से जानना चाहिये।

"अब स्वकायस्थिति-द्वार कहते हैं।"

एगिंदिया य सव्वे, असंख उस्सप्पिणी सकायंमि
उववज्जंति चयंति अ, अणंतकाया अणंताओ॥४०

(सव्वे) सब (एगिंदिया) एकेन्द्रिय जीव (असंख उस्सप्पिणी) असंख्य उत्सर्पिणी तथा अवसर्पिणी तक (सकायंमि) अपनी काया में (उववज्जंति) उत्पन्न होते हैं (अ) और (चयंति) मरते हैं; (अणंतकाया) अनन्तकाय जीव (अणंताओ) अनन्त उत्सर्पिणी तथा अवसर्पिण तक ॥४०॥

भावार्थ—पृथ्वी, अप्, तेज, वायु और वनस्पति काय के जीव, उसी पृथ्वी आदि की अपनी काया में; असंख्य उत्सर्पिणी-अवसर्पिण तक पैदा होते तथा मरते हैं; अनन्तकाय के जीव तो उसी अपनी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

काया में अनन्त उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी तक पैदा होते तथा मरते हैं।

प्र०—उत्सर्पिणी किसको कहते हैं ?

उ०—दस क्रोड़ा क्रोड़ी सागरोपम की एक उत्सर्पिणी तथा उतनेकी ही एक अवसर्पिणी होतीहै।

"द्वीन्द्रिय आदि जीवों की स्वकाय स्थिति।"

संखिज्जसमा विगला,
सत्तट्ठ भवा पणिंदि-तिरि-मणुया।
उववज्जंति सकाए,
नारय देवा अ नो चेव ॥४१॥

(विगला) विकलेन्द्रिय जीव (संखिज्जसमा) संख्यात वर्षों तक (सकाए) अपनी काया में (उवव-ज्जंति) पैदा होते हैं, (पणिंदि-तिरि-मणुया) पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च और मनुष्य (सत्तट्ठ भवा) सात-आठ भव तक, लेकिन (नारय देवा) नारक और देव (नो चेव) नहीं ॥४१॥

भावार्थ—द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय जीव, स्वकाया में संख्यात वर्षों तक पैदा होते तथा मरते हैं; पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च तथा मनुष्य लगातार सात तथा आठ भव करते हैं अर्थात् मनुष्य, लगा-तार सात-आठ वार, मनुष्य-शरीर धारण कर

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सकता है, इस प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च भी लेकिन देवता तथा नारक जीव मर कर फिर तुरन्त अपनी योनि में नहीं पैदा होते अर्थात् देव मर कर फिर तुरन्त देवयोनि में नहीं पैदा हो सकता। इस प्रकार नारक जीव मरकर तुरन्त नरकमें नहींपैदा होता। हाँ, एक दो जन्म दूसरी गतियों में बिता कर फिर देव या नरक-योनि में पैदा हो सकते हैं। इसी तरह देव मरकर तुरन्त नरक-योनि में नहीं जाता और नारक जीव मरकर तुरंत देव-योनि में नहीं पैदा हो सकता।

"अब प्राण-द्वार कहते हैं।"

दसहा जियाण पाणा,
इंदि-उसासाउ-जोगबलरूवा।
एगिंदिएसु चउरो,
विगलेसु छ सत्त अट्ठेव ॥४२॥

(जियाण) जीवों को (दसहा) दस प्रकार के (पाणा) प्राण होते हैं-;(इंदि-उसासाउ-जोगबलरूवा) इन्द्रिय, श्वासोच्छ्वास, आयु और योगबल रूप, (एगिंदिएसु) एकेन्द्रियों को (चउरो) चार प्राण हैं, (विगलेसु) विकलेन्द्रियों को (छ सत्त अट्ठेव) छः, सात और आठ ॥४२॥

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भावार्थ---प्राणोंकी संख्या दस हैं.-पाँच इन्द्रियाँ, श्वासोच्छ्वास, आयु, मनोबल, बचनबल और कायबल। इन दस प्राणों में से चार-त्वचा, श्वासोच्छ्वास, आयु और कायबल एकेन्द्रिय जीवों को होते हैं; द्वीन्द्रिय जीवों को छः प्राण--त्वचा, रसना (जीभ), श्वासोच्छ्वास, आयु, कायबल और बचनबल; त्रीन्द्रिय जीवों को सात प्राण-त्वचा, जीभ, नाक, श्वासोच्छ्वास, आयु, कायबल और बचनबल; चतुरिन्द्रिय जीवों को आठ प्राण-पूर्वोक्त सात, और आँख।

असन्नि-सन्नि-पंचिं,—
दिएसु नव दस कमेण बोधव्वा।
तेहिं सह विप्पओगो,
जीवाणं भण्णए मरणं॥४३॥

(असन्नि-सन्नि-पंचिंदिएसु) असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय तथा संज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीवों को (कमेण) क्रम से (नव दस) नव और दस प्राण (बोधव्वा) समझना (तेहिं सह) उनके साथ (विप्पओगो) विप्रयोग वियोग, (जीवाणं) जीवों का (मरणं) मरण (भण्णए) कहलाता है॥४३॥

भावार्थ---असंज्ञी पञ्चेन्द्रियों को त्वचा, जीभ, नाक, आँख, कान, श्वासोच्छ्वास, आयु, कायबल

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और वचनबल ये नव प्राण होते हैं और संज्ञी पञ्चेन्द्रियों को पूर्वोक्त नव और मनोबल, ये दस प्राण कहे गये हैं, जिनको जितने प्राण कहे गये हैं, उन प्राणों के साथ वियोग होना ही उन जीवों का मरण कहलाता है। देव, नारक, गर्भज तिर्यञ्च तथा गर्भज मनुष्य, ये संज्ञी पञ्चेन्द्रिय कहलाते हैं। सम्मूर्च्छिम तिर्यञ्च और सम्मूर्च्छिम मनुष्य, असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय कहलाते हैं। सम्मूर्च्छिम मनुष्यों को मनोबल और वाक्बल नहीं है, इसलिये उनके आठ प्राण, और श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति पूर्ण न होने के कारण सात प्राण होते हैं।

"जीवों का प्राण-वियोग-रूप मरण कितने बार हुआ है, सो कहते हैं।"

एवं अणोरपारे, संसारे सायरंमि भीमंमि ।
पत्तो अणंतखुत्तो, जीवेहि अपत्तधम्मेहिं ॥

(अपत्तधम्मेहिं) नहीं पाया है धर्म जिन्होंने ऐसे (जीवेहिं) जीवों ने (अणोरपारे) आर-पार-रहित आदि-अन्त-रहित (भीमंमि) भयङ्कर (संसारे सायरंमि) संसार रूप समुद्र में (एवं) इस प्रकार-प्राण-वियोग-रूप मरण (अणंतखुत्तो) अनन्त वार (पत्तो) प्राप्त किया ॥४४॥

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भावार्थ—संसार का आदि नहीं है, न अन्त है; अनंतबार जीव मर चुके हैं और आगे मरेंगे सुदैव से यदि उन्हें धर्म की प्राप्ति हुई तो जन्म मरण से छुटकारा होगा।

"अब योनिद्वार कहते हैं।"

तह चउरासी लक्खा,
संखा जोणीण होइ जीवाणं।
पुढवाईण चउण्हं,
पत्तेयं सत्त सत्तेव ॥४५॥

(जीवाणं) जीवों की (जोणीण) योनियों की (संखा) संख्या (चउरासी लक्खा) चौरासी लाख (होइ) है। (पुढवाईण चउण्हं) पृथ्वीकाय आदि चार की प्रत्येक की योनि-संख्या (सत्त सत्तेव) सात सात लाख है॥ ४५ ॥

भावार्थ—जीवों की चौरासी लाख योनियाँ हैं, यह बात प्रसिद्ध है। उसको इस प्रकार समझना चाहिये:-पृथ्वीकाय की सात लाख, अप्काय की सात लाख, तेजःकाय की सात लाख और वायु-काय की सात लाख योनियाँ हैं; सबको मिलाकर अट्ठाईस लाख हुईं।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रश्न—योनि किसको कहते हैं ?

उ०—पैदा होने वाले जीवों के जिस उत्पत्ति-स्थान में वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श, ये चारों समान हों, उस उत्पत्ति-स्थान को उन सब जीवों की एक योनि कहते हैं।

दस पत्तेयतरूणं,
चउदस लक्खा हवंति इयरेसु ।
विगलिंदिएसु दो दो,
चउरो पंचिंदितिरियाणं ॥ ४६ ॥

(पत्तेयतरूणं) प्रत्येक वनस्पतिकाय की (दस) दस लाख योनियाँ हैं, (इयरेसु) प्रत्येक वनस्पतिकाय से इतर–साधारण वनस्पतिकाय की (चउदस लक्खा) चौदह लाख (हवंति) हैं; (विगलिंदिएसु) विकलेन्द्रियों की (दो दो) दो दो लाख हैं, (पंचिंदितिरियाणं) पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चों की (चउरो) चार लाख हैं ॥४६॥

भावार्थ—प्रत्येक वनस्पतिकायकी दस लाख, साधारण वनस्पतिकायकी चौदह लाख, द्वीन्द्रिय की दो लाख, त्रीन्द्रियकी दो लाख, चतुरिन्द्रिय की दो लाख और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चों की चार लाख योनियां हैं।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चउरो चउरो नारय,-
सुरेसु मणुआण चउदस हवंति ।
संपिंडिया य सव्वे,
चुलसी लक्खाउ जोणीणं ॥ ४७ ॥

(नारय सुरेसु) नारक और देवों की (चउरो चउरो) चार चार लाख योनियां हैं; (मणुआण) मनुष्यां की (चउदस) चौदह लाख (हवंति) हैं; (सव्वे) सब (संपिंडिया) इकट्ठी की जांय- मिलाई जांय तो (जोणीणं) योनियों की संख्या (चुलसी लक्खाउ) चौरासी लाख होती हैं ॥४७॥

भावार्थ — नारक जीवों की चार लाख, देवों की चार लाख और मनुष्यों की चौदह लाख योनियां हैं। योनियों की सब संख्या मिलाने पर चौरासी लाख होती है।

"अब सिद्ध जीवों के विषय में कहते हैं।"

सिद्धाण नत्थि देहो,
न आउ कम्मं न पाण जोणीओ ।
साइ-अणंता तेसिं,
ठिई जिणिंदागमे भणिया ॥ ४८ ॥

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

(सिद्धाण) सिद्ध जीवों को (देहो) शरीर (नत्थि) नहीं है, (न आउ कम्मं) आयु और कर्म नहीं है, (न पाण जोणीओ) प्राण और योनि नहीं है, (तेसिं) उनकी (ठिई) स्थिति (साइ अणंता) सादि और अनन्त है; यह बात (जिणिदागमे) जैन सिद्धान्तों में (भणिया) कही गई है॥४८॥

भावार्थ—सिद्ध जीवों को शरीर नहीं है इसलिये आयु और कर्म भी नहीं है, आयु के न होने से प्राण और योनि भी नहीं है, प्राण के न होने से मृत्यु भी नहीं है; उनकी स्थिति सादि-अनन्त है अर्थात् जब वे लोक के अग्र भाग पर अपने स्वरूप में स्थिति हुए, वह समय उनकी स्वरूप-स्थिति का आदि है तथा फिर वहां से च्युत होना नहीं है इसलिये स्वरूप-स्थिति अनन्त है; यह बात जैन सिद्धान्त में कही गई है।

"फिर से संसारी जीवोंका स्वरूप कहते हैं"

काले अणाइनिहणे,जोणीगहणंमि भीसणे इत्थ।
भमिया भमिहिंति चिरं,जीवा जिणवयणमलहंत॥

(अणाइ निहणे) आदि और अन्त-रहित अर्थात् अनादि अनन्त (काले) काल में (जिण-वयणं) जिनेन्द्र भगवान् के उपदेश रूप वचन को (अलहंता) न पाये हुए (जीवा) जीव; (जोणी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गहणंमि) योनियों से क्लेशरूप (भीसणे) भयङ्कर (इत्थ) इस संसार में (चिरं) बहुत काल तक (भमिया) भ्रमण कर चुके और (भमिहिंति) भ्रमण करेंगे ॥ ४९ ॥

भावार्थ—चौरासी लाख योनियों के कारण दुःखदायक तथा भयङ्कर इस संसार में, जिनेन्द्र भगवान् के बतलाये हुए मार्ग को न पाये हुए जीव, अनादि कालसे जन्ममरण के चक्कर में फँसे हुए हैं तथा अनन्त काल तक फँसे रहेंगे।

"अब ग्रन्थकार अपना नाम सूचित करते हुए धर्मोपदेश देते हैं।"

ता संपइ संपत्ते, मणुअत्ते दुल्लहे वि सम्मत्ते।
सिरिसंतिसूरिसिट्ठे, करेह भो उज्जमं धम्मे॥५०॥

(ता) इसलिये (संपइ) इस समय (दुल्लहे) दुर्लभ (मणुअत्ते) मनुजत्व–मनुष्य जन्म और (सम्मत्ते) सम्यक्त्व (संपत्ते) प्राप्त हुआ है तो (सिट्ठे) शिष्ट–सज्जन पुरुषों से सेवित ऐसे (धम्मे) धर्म में (भो) अय प्राणियो ! (उज्जमं) उद्यम–पुरुषार्थ (करेह) करो, ऐसा (सिरिसंतिसूरि) श्री शान्तिसूरि उपदेश देते हैं ॥ ५० ॥

भावार्थ—जब कि संसार भयङ्कर है और चौरासी लाख योनियों के कारण उससे पार

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पाना मुश्किल है और उचित सामग्री-मनुष्य—जन्म और सम्यक्त्व-सच्ची श्रद्धा—भी प्राप्त हुई है इसलिये हे भव्य जीवो ! प्रमाद न करके, महा पुरुषों ने जिस धर्म का सेवन किया है उसका तुम भी सेवन करो; क्योंकि बिना धर्म की सेवा किये तुम जन्म-मरण के जञ्जाल से नहीं छूट सकोगे।

"इस ग्रन्थ में जो कुछ जीवों के स्वरूप के विषय में कहा गया है वह सिद्धान्त के अनुसार है"

एसो जीववियारो, संखेवरुईण जाणणाहेउं।
संखित्तो उद्धरिओ, रुद्दाओ सुयसमुद्दाओ॥५१॥

(संखेवरुईण) संक्षेपरुचियों के-अल्पमतिओं के (जाणणा हेउं) जानने के लिये। (रुद्दाओ) रुद्र-अतिविस्तृत (सुयसमुद्दाओ) श्रुतसमुद्र से (एसो) यह (जीववियारो) जीवविचार (संखित्तो) संक्षेप से (उद्धरिओ) निकाला गया ॥५१॥

भावार्थ—सिद्धान्तों में जीवों के भेद आदि विस्तार से कहे गये हैं इसलिये अल्प बुद्धि वाले लाभ नहीं उठा सकते; उनके जानने के लिये संक्षेप में यह "जीवविचार" सिद्धान्त के अनुसार बनाया गया है, इसके बनाने में अपनी कल्पना को स्थान नहीं दिया गया।

जीवविचार समाप्त।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www. kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

श्री आत्मानन्द-जैन-पुस्तक-प्रचारक-मण्डल
रोशन मुहल्ला, आगरा।

Serving JinShasan
077404
gyanmandir@kobatirth.org

For Private And Personal Use Only